आर्थिक समस्याएँ --

मनुष्य के जीवन को सुचारु रूप से संचालित करने में अर्थ महत्वपूर्ण भूमिका निभाता रहा है। अर्थव्यवस्था में अगर संतुलन न हो तो किसी भी राष्ट्र की प्रगति या उन्नति नहीं हो सकती। भारत कृषिप्रधान अर्थव्यवस्था वाला देश है और ग्रामीण जीवन या ग्राम ही इस अर्थव्यवस्था के आधार रहे हैं। अर्थ - व्यवस्था के मूल आधार होते हुए भी स्वयं गाँव आर्थिक रूप से पीछे हैं, यही एक बहुत बड़ी विडम्बना है। किसान इतनी मेहनत करते हैं फिर भी न तो उसे भरपेट अन्न मिलता है और न तन ढाँकने के लिए कपड़ा ही। उन्हें महाजनों की कृपापर निर्भर रहना पड़ता है और वे जो कर्जा लेते हैं उसके सूद के चक्रव्यूह में फँस जाते हैं।

सामन्ती व्यवस्था के आगमन के बाद महाजनों का, पूँजीपतियों का वर्चस्व और भी बढ़ गया। सामन्तों ने किसानों के सुधार के लिए प्रयास नहीं किये सिर्फ अपने-आप को मिलनेवाले फायदे के बारे में सोचते रहे। शुभ- अशुभ कार्यों में किसानों से जबरदस्ती धन ऐंठते रहे। किसान वर्ग पढ़ालिखा न होने के कारण वह सब-कुछ चुपचाप सहता रहा।

'अंग्रेजों की शोषण नीति और व्यापार वृत्ति के कारण तथा बाद में औद्योगिक क्रांति के कारण भारतीय देहातों में कुटिरोद्योग तथा कृषिप्रधानता नष्ट होती गयी। इसी कारण ग्रामीण किसान वर्ग निर्धन बनता गया। इस काल में जमींदारी और महाजनी प्रथा शुरु हो गयी। जमींदार और महाजन सामान्य किसानों का अनवरत शोषण करने लगे जिससे किसानों को कर्ज में ही जन्म लेना,कर्ज में ही मरना क्रमप्राप्त हो गया। पंडित-पुरोहितों ने भी किसानों के अज्ञान और निर्धनता का लाभ अनेक त्योहार ,विवाह-विधी,पूजा-अर्चा, प्रायश्चित,अंधविश्वास,अंधश्रध्दा जैसी विसंगतियों के आधारपर उठाया, जिसमें किसानों की आर्थिक स्थिति को और खोखला बना दिया। इसके साथ ही प्रकृति

के प्रकोप जैसे भूकम्प, बाढ़, अकाल, बिमारी आदि के कारण भी किसानों की आर्थिक स्थिति दयनीय बनती गयी।

नागार्जुन ने अपने उपन्यास 'रतिनाथ की चाची' में शुभंकरपुर गाँव और मिथिलांचल की कई आर्थिक समस्याओं को दर्शाया है। शुभंकरपुर गाँव के किसानों की आर्थिक स्थिति बहुत ही कमजोर हो गयी थी। इसके पीछे कई तरह के कारण थे। इस संदर्भ में मुझे यह कहना है कि -- 'नागार्जुन ने अपने उपन्यासों में निम्नवर्ग में व्याप्त गरीबी और बेकारी का विस्तृत रूप में अंकन किया है। अज्ञानी किसान-मजदूरों के श्रम का शोषण दिन-दहाडे होता है अत: उसे दो वक्त की रोटी मयस्सर होना कठिन हो गया है।'

नागार्जुन द्वारा लिखित 'रतिनाथ की चाची' उपन्यास में निम्न - लिखित आर्थिक समस्याएँ दिखाई देती हैं --

(१) जमींदारों, महाजनों के द्वारा शोषण।
(२) निरक्षरता।
(३) बेकारी, गरीबी।
(४) अंधश्रद्धा।
(५) बेगार प्रथा।
(६) बिमारियों का राहत कार्य विलम्ब से।
(७) प्राकृतिक आपत्तियाँ।

(१) जमींदारों, महाजनों के द्वारा शोषण --

सामन्ती युग का प्रतिनिधित्व करनेवाले ये दो प्रमुख अंग हैं। ग्रामीण समाज विशेष कर किसान इनकी मेहरबानी पर जीता है। किसानों को हमेशा

SHIVAJI UNIVERSITY LIBRARY KOLHAPUR

इनकी जरूरत पड़ती है। किसानों की निरक्षरता ,उनके पीछड़ेपन का फायदा ये लोग उठाते रहते है। उनकी जमीनें गिरवी रखकर उन्हें सूद पर पैसे दे देते हैं। मोले-माले किसान और मजदूर उनके कहने के मुताबिक कोरे कागज पर अँगूठा लगा देते हैं और उनका पूरा जीवन इसी कर्जे को चुकाने में बीत जाता है। हर साल नया कागज, नया अँगूठा। हर साल ये सूद के रूप में खेतों में उपजा अनाज दे देते हे और उनका सूद कम नहीं होता। असल की तो बात ही दूर। इन महाजनों के, जमींदारों के शोषण की वजह से ही ग्रामीण समाज आर्थिक रूप से पीछड़ गया है। बढते हुए सूद से किसान हतबल हो जाता है और शोषक अपने गोदामों को मरते रहते हैं। बेचारे किसान दिन-रात मेहनत करके जो अनाज पैदा करते है,उन्हें कमी-कमी मूखे पेट तक सोना पड़ता हैं। उनकी चाहे कितनी मी हालात पस्त क्यो न हो उन्हें सूद के रूप में पैदा किये अनाज का हिस्सा देना ही पड़ता है। शेष बचा अनाज पूरे परिवार का महिनेमर पेट पालने में मी असमर्थ होता है। इन जमींदारों और महाजनों के ड़र से किसान गाँव छोड़कर माग मी जाना चाहे तो मी मुश्किल होता है। उनके पाले हुए गुण्डे किसानों को रोक देते हैं। कमी-कमी पूरी उम्र यह कर्जा चुकाने में चली जाती है। फिर मी पूरी तरह से कर्जा नहीं उतर पाता। कर्ज की किश्त न देनेपर उन्हें कड़ी-से-कड़ी सजाएँ दी जाती हैं।

नागार्जुन ने मी ऐसी कई बातों का 'रतिनाथ की चाची' में वर्णन किया है जो जमींदारों और महाजनों के शोषण को प्रकट करती है। जैसे 'इस मौजे के मालिक रायबहादुर दुर्गानन्दनसिंह बड़े जमींदार तो थे ही,साथ ही लहना-नगादा का मारी कारोबार मी चलाते थे। आस-पास की पाँच कोस की जमीन पर उनकी छत्रछाया थी। तीन लाख रूपये पचीसों बस्तियों के इस समुद्र में दाँत निपोड़े पूँछ कड़ी लिए मगरों की माँति टहल-कूल रहे थे। व्याज की दर प्रतिमास डेढ-रुपये सैकड़ा थी। राजाबहादुर पुराने अँगूठे को साल-साल नया करवाते जाते। सूद मी मूल बनता जाता। चक्रवृद्धि का यह क्रम राजाबहादुर की शरीर वृद्धि के लिए रसायन का काम कर रहा था। कहते है,हवेली में नकद

रुपये रखने के लिये उन्हें बहुबच्चा बनाना पड़ा था।' [१]

जब राजाबहादुर ने पंडितों से अपने आप को 'धर्म दिवाकर' की उपाधि ले ली तब उन्होंने कई मिठाईयाँ बाँटी। उनकी जूठन शूद्रों ने कई दिनों तक खायी और जूठन खाकर भी वे शूद्र प्रसन्न होकर मालिकों का गुणगान कर रहे थे।

जब सन ३७ का काँग्रेसी जमाना आ गया और जमींदार चुनावों में हार कर भविष्य की चिंता में लीन हो गये थे और बाद में पैंतरे बदलकर काँग्रेसी मंत्रियों को परम्परा की दुहाई देकर धमकियाँ दी तो उन मंत्रियों ने किसानों की ओर पीठ फेर दी और जमींदारों के तलवे चाटना शुरु किया। किसान तो पहले से ही उपेक्षित जीवन जी रहे थे और जिनसे उन्होंने आशा की थी उन्होंने ही किसानों को अपने पैरोंतले रौंद दिया। बिहारी काँग्रेस पर तब बहुत कड़ी आलोचना जवाहरलाल नेहरू तक ने कि इसपर जमींदारों का असर है। मंत्रियों के द्वारा मोहभंग हो जाने के कारण किसान क्रोधित हुए और संगठित होकर उन्होंने किसान-कुटी बनवाई। लोगों ने खुले हाथ से चंदा दे दिया। उनका नारा था कि कमानेवाला खायेगा, इसके चलते जो कुछ हो। 'संगठन की यह हवा राजाबहादुर की भी जमींदारी में पहुँची। उनकी सूदखोरी और जमींदारशाही से सारा इलाका तंग आ गया था। हजारों बीघा जमीन वे किसानों को मनखप (कूत, मनहुन्डा) दिये हुए थे। चार मन फी बीघा से लेकर प्रन्द्रह मन फी बीघा तक रेट था। शुभंकरपुर के ग्वाले सत्तर-अस्सी बीघा खेत मनखप पर जीतते थे। वे लोग भी सुरफराए।' [२]

किसानों का यह आंदोलन तब तक चलता रहा जब तक पड़ोस के एक दूसरे छोटे जमींदार ने राजाबहादुर के शुभंकरपुर वाले सारे खेत लिखा नहीं लिए। किसान भूमि छोड़ने के लिए तैयार न थे। मुकदमा लड़ते-लड़ते पस्त हो चुके थे। नाराचरण ने

---

१ नागार्जुन - रतिनाथ की चाची - पृ.८३।

२ -वही - पृ.८५।

मध्यस्ती कर जमींदारों से यह मनवा लिया कि खेत किसानों की जीत में ही रहेंगे। फी बीघा ग्यारह मन के हिसाब से अनाज इसके एवज में उसे साल-साल मिलता रहेगा।

इस प्रकार हम देखते हैं कि जमींदारों और महाजनों के शोषण की वजह से किसानों की स्थिति किस तरह दयनीय बन गयी थीं। इस बात का चित्रण नागार्जुन ने किया है। किसानों की आर्थिक दशा को और अधिक कमजोर करने का काम इन्होंने किया है। वे ही किसान जब विद्रोह को अपनाते हैं तब जमींदारों को झुकना पड़ता है, इस तथ्य को उजागर करने में नागार्जुन सफल है।

(२) <u>निरक्षरता</u> --

निरक्षरता अर्थाभाव की जड़ होती है और ग्रामीण जीवन का सबसे बड़ा अभिशाप उनकी निरक्षरता है और नागार्जुन जैसे आँचलिक उपन्यासकार ने अपने उपन्यासों में अधिकतर ग्रामांचलों का ही चित्रण किया है। डा.कमल गुप्ता कहती है --

'आँचलिक उपन्यासों का कथन ऐसे व्यक्तियों के जीवन की झाँकी प्रस्तुत करता है जहाँ अशिक्षा का कुहासा है तथा वे रूढियों एवं अंधविश्वासों की जंजीरों में जकड़े हुए है। रूढ़ परम्पराओं से हट कर यदि कोई तथ्य उन्हें दिखाई देता है तो उसका विरोध करते हैं। वे उस जीवन से इतने अभ्यस्त हो गये हैं कि उसी में उन्हें अपना कल्याण दिखाई देता है, वे उस गर्त से निकलने के न इच्छुक हैं न चेष्टावान। गाँव में होनेवाले प्रत्येक प्रगतिशील कार्य का विरोध करते हैं। गरीबी और अज्ञान की परतें एक पर एक न जाने कब जैसी जमती चली आ रही है। पारिवारिक वैमनस्य के कारण गाँव झगड़ों के अखाड़े बन गए है। आँचलिक उपन्यासकारों ने निरक्षरता और अज्ञान के अभिशाप का जम कर चित्रण किया है।' [१]

---

१ डॉ.कमल गुप्ता - हिन्दी उपन्यास में सामन्तवाद - पृ.४३४।

नागार्जुन के 'रतिनाथ की चाची' उपन्यास में भी निरक्षरता की समस्या दिखाई देती है। रतिनाथ की चाची गौरी को जब जयनाथ छोड़कर चले जाते हैं तो वह अपनी समस्या बताने के लिए उन्हें खत भी नहीं लिख पाती थी क्योंकि वह निरक्षर थी। अगर वह साक्षर होती तो उसे समाज की प्रताड़ना इतने दिनों तक सहनी नहीं पड़ती। जो काम उसने समाज की इतनी प्रताड़ना सहने के बाद किया वह पहले भी कर सकती थी।

ग्रामीण लोगों के निरक्षरता का लाभ सबसे पहले तो जमींदार और महाजन उठाते हैं। वे गरीब किसानों से कोरे कागज पर अंगूठा लगवा कर चाहे तो लिख लेते हैं और उनके द्वारा लिया थोड़ा-सा कर्जा चुकाने में उन्हें वर्षों लग जाते हैं। कभी-कभी तो पूरी उम्र भी यह कर्जा चुक नहीं पाता है।

ब्राह्मण और पण्डित भी गरीब किसान, मजदूरों की निरक्षरता का फायदा उठाते हैं। ब्राह्मण तो शूद्रों का और अन्य सभी को भी उनके अज्ञान का फायदा उठाकर उनका शोषण करते हैं। आलोच्य उपन्यास में जब कुल्ली राउत जैसे नौकर ने गायत्री मंत्र सीख लिया और अन्य भी कई स्तोत्र सीख लिये, यह बात जब जयनाथ जान लेता है तो वह क्रोधित हो जाता है और कहता है कि, वह उसकी चमड़ी उधेड़ देगा, अगर वह शूद्र है तो उसने शूद्र की भाँति ही रहना चाहिए। अर्थात् अगर किसी ने गलती से भी मंत्र, स्तोत्र, पढ लिये तो भी वह वर्ग उन्हें पीड़ित किया करता था और अपना अधिपत्य बनाए रखता था। अन्य सभी पर कठोर बन्धन उन्होंने डाल दिये थे। अगर जरा कहीं कोई चूक जाता तो उसे कड़ी-से-कड़ी सजा दी जाती थी।

किसान अज्ञान और निरक्षरता की वजह से अपनी पुरानी रूढि-परम्पराओं में जकड़े रहते थे। इस बात का फायदा भी पण्डित और ब्राह्मण उठाते थे। उनकी इस मजबूरी से फायदा उठाकर उनसे पैसा वसूल करने में भी वे सफल हो जाते थे।

'रतिनाथ की चाची ' उपन्यास में ग्रामीण युवकों में कुछ सुधार दिखाया गया है। इस शुभंकरपुर गाँव के कई युवक पढ़े-लिखे भी है परंतु न तो उनका समाज के लिए कोई उपयोग है और नही माता-पिता के लिए। क्योंकि वे पढ़-लिखकर शहरों में रहने के लिए चले गये है। थोड़ा-बहुत फायदा इस तरह हुआ कि किसान संगठित हो गये और उन्होंने इस जमींदारी प्रथा के विरुद्ध आवाज उठायी और अपनी माँगे पूरी करवाने के लिए काफी प्रयास किये। और उसमें वे सफल भी हुए। परंतु पूरी तरह से निरक्षरता इस गाँव से हट नहीं पायी।

निरक्षरता की यह समस्या तो आज भी हमारे समाज में पायी जाती है। लेकिन उस समय यह समस्या प्रखर रूप में विद्यमान थी जबयह उपन्यास लिखा गया। लेकिन यही समस्या किसानों के आर्थिक पक्ष को कमजोर करने में कारण बन गयी। यही वजह है कि किसान आर्थिक रूप में दुर्बल हो गये।

(३) अर्थाभाव और बेकारी --

ग्रामीण अँचल का चित्रण अगर कोई साहित्यकार करना चाहे तो उसे वहाँ की सभी समस्याओं का चित्रण अनिवार्य रूप से करना पड़ेगा। इसमें अर्थाभाव और बेकारी की समस्या महत्वपूर्ण समस्या है। क्योंकि गाँवों में रहनेवाले लोग अधिकतर खेती करते हैं और उन्हें जमींदार और महाजन शोषित करते रहते है। इसलिए अर्थाभाव और बेकारी ये दोनों ही समस्याएँ गाँवों में प्रमुखतम रूप में पायी जाती है। दिन-रात मेहनत करके भी किसान दो वक्त की रोटी नहीं पा सकते। यह उनके जीवन की त्रासदी है। जो अनाज पैदा करते है, वह भी पूरी तरह से उनके घर नहीं पहुँचता। जमींदार और महाजनों के कारिन्दे वह बीच में ही लगान के रूप में हड़प कर लेते हैं।

नागार्जुन के आलोच्य उपन्यास में भी इसी समस्या को उठाया है।

SHIVAJI UNIVERSITY LIBRARY KOLHAPUR

'रतिनाथ की चाची' गौरी के घर के हालात कितने कमजोर हैं यह दिखाते हुए नागार्जुन ने लिखा है --

'दिन का भात हाँडी में था, पत्थर के बड़े कटोरे में दाल थी। एक दूसरी पथरोटी में जरा-सा बैंगन का चोखा रखा हुआ था।' [१]

सिर्फ रतिनाथ की चाची की यही स्थिति थी ऐसी बात नहीं है।

'मिथिला का ब्राह्मण जो जितना ही कुलीन होता है, उसकी दरिद्रता भी उतनी ही बड़ी हुआ करती है। इंद्रमणि को भी अपनी तीन कन्याओं का भरण-पोषण आजन्म करना पड़ा, क्योंकि चार में से तीन दामाद परम अभिजात और महादरिद्र थे।' [२]

कुलीनता के मोह में आकर अत्यंत गरीब घर में अपनी बेटी ब्याहनेवाले इन मैथिल ब्राह्मणों के बारे में तेजसिंह ने कहा -- 'रतिनाथ की चाची' उपन्यास में कुलीनता का ध्यान न रखकर जयनाथ के पिता ने अपनी पुत्री सुमित्रा का विवाह बहहड़वा गाँव में मेवालाल ठाकुर से इसलिए कर दिया था कि वे एक बड़े काश्तकार थे। ठाकुरजी ने गरीब ब्राह्मण के घर को धन दौलत से भर दिया था और सुमित्रा गहनों से लद गई थी। इसका मूल कारण आर्थिक है। इसी तरह विधवा गौरी ने भी अपनी आर्थिक विपन्नता के कारण ऋण से छुटकारा पाने के लिए सत्रह साल की प्रतिभाया की शादी कुलीनता की दृष्टि से बहुत ही नीच, मूर्ख और चालीस साल के अधेड़ ब्राह्मण से सात सौ नकद गिनकर कर दी थी। इस प्रकार नारी-विक्रय का मूल कारण आर्थिक रहा है। [३]

गौरी की माँ के घर जब जयनाथ गौरी को छोड़कर चला गया तब वहाँ पर पड़े हुए अन्न और उनके घर के नौकरानी सुक्खो की दशा का वर्णन कर सुक्खो

---

१ नागार्जुन - रतिनाथ की चाची - पृ.११।

२ वही पृ.२१।

३ तेजसिंह - नागार्जुन का कथा-साहित्य - पृ.६६ T

12946
A

की गरीबी का चित्रण किया है --

'जयनाथ सवेरे ही खाकर चले गये थे और तब से अब तक करीब आठ-नौ घण्टे खाने की यह सामग्री खुली पड़ी थी। सैकड़ों मक्खियाँ इससे परितृप्त हुई होंगी। जौ-मकई-मडुवा की रोटी खाकर तंग आए हुए सुक्खो के बच्चे देखते ही इस पर टूट पड़ेंगे, चाट-पोंछकर थाली साफ कर देंगे। सुक्खो, उसकी सास, उसका घरवाला सब ललचाई निगाहों से उस दृश्य को देखभर सकेंगे।' [१]

रतिनाथ के पिता तो सिर्फ इसलिये उसे अपर प्राइमरी की किताबें खरीदकर नहीं दे देते कि वे काफी महँगी है। वास्तव में रतिनाथ अत्यंत होशियार है परन्तु -'इधर-उधर टोह लेकर जयनाथ को जब पता चला कि चार-पाँच रूपये सिर्फ किताबों में ही लग जाएँगे तो तै किया - नहीं, कभी नहीं। यह नहीं हो सकता। प्रात:स्मरणीय नीलमाधव उपाध्याय का वंशधर म्लेच्छ भाषा पढ़ेगा ? उस दिन धरती उलट जाएगी और आसमान से अंगारे बरसने लगेंगे। वकील बालस्टर बनकर प्याज-लहसुन और अंडा नहीं खाना है स्त्री को, उसे तो पूर्वजों की कीर्ति रक्षा करनी है। ...' [२]

यही बहाना बनाकर जयनाथ रत्ती को एक फटा-कटा 'अमरकोष' लाकर देते है और केवल गरीबी के कारण इच्छा होते हुए भी वे उसे अंग्रेजी पढ़ने से रोक देते हैं।

शुभंकरपुर गाँव की स्थिति ऐसी है -'ढाई सौ परिवारों की आबादी, खानेवाले मुँह ग्यारह सौ। साफ है कि गरीब ही अधिक थे ... असलियत यह थी कि लूट लाओ, कूट खाओ।' [३]

---

१ नागार्जुन - रतिनाथ की चाची - पृ.२७।

२ वही - पृ.३३।

३ वही पृ. ।

BARR. BALASAHEB KHARDEKAR LIBRARY
SHIVAJI UNIVERSITY, KOLHAPUR

इस प्रकार नागार्जुन ने 'रतिनाथ की चाची' में अर्थाभाव और बेकारी की समस्या को दर्शाते हुए बेकारी आर्थिक समस्या का एक कारण कैसे बनती है, इसका चित्रण किया है।

(४) अंधश्रद्धा --

आर्थिक समस्या का मूलाधार अंधश्रद्धा एवं रूढि परंपराएँ भी है। आम तौरपर देखा जाए तो ग्रामीण समाज रूढि प्ररम्पराओं में जकड़ा हुआ ही होता है और सामन्ती युग में उनका दृष्टिकोण परम्परावादी रहा। पापपूर्ण जीवन जीने के कारण उनके मन में ईश्वर के प्रति भय की भावना भी रही और यह भय और विश्वास विभिन्न देवी-देवताओं के प्रति और भूत-प्रेतों के प्रति प्रकट होता था। ग्रामीण समाज अज्ञान के कारण इन सभी के प्रति अपनी अंधश्रद्धा प्रकट करता है। इस अंधश्रद्धा के कारण ही कई बार उन्हें कई तरह की परेशानियों का सामना करना पड़ता है। जैसे - अगर किसी को साँप ने डस लिया हो तो उसपर मंत्रोच्चारण विधि कर उसके विष को उतारने का प्रयास किया जाता है। अगर सही समय पर उसे डाक्टर के पास न ले गये तो उस व्यक्ति की मौतभी हो जाती है। इसी तरह कई रूढि-परंपरा, रीतिरिवाजों में जकड़कर लोग अपना नुकसान कर लेते हैं। उनके इस अज्ञान का फायदा समाज का जो उच्च वर्ग का ब्राह्मण वर्ग या पण्डित लोग उठाते हैं। उन्हें धर्म की आड़ लेकर लूटते रहते हैं। इनका शोषण करते रहते है। तरह-तरह के प्रलोभन देकर वे उनसे पैसे ले लेते हैं और भोले-भाले लोग कर्जा निकालकर क्यों न हो उन्हें पैसे दे देते हैं।

'रतिनाथ की चाची' का भोला पण्डित इसी तरह का एक स्वार्थी पंडित है। 'असमर्थ व्यक्तियों के प्रति इस ब्राह्मण के हृदय में असीम करुणा थी। कितने ही लूले, लंगड़े, अन्धे, अपाहिज और बूढ़े भोला पंडित की कृपा से अधखिली कलियों जैसी बालिकाओं को गृह-लक्ष्मी के रूप में पाकर निहाल हो गए। एक-एक ब्याह

SHIVAJI UNIVERSITY LIBRARY KOLHAPUR

में पचास-पचास रुपये पंडित के बंधे हुए थे।"[१]

इस प्रकार स्वार्थ की भावना दिल में रखकर काम करनेवाले इस पंड़ित को कई लड़कियाँ कोस रही थीं। सिर्फ लड़कियों को ही नहीं उसने दस-पाँच लड़कों को भी ठगा दिया।

गौरी की बेटी प्रतिभाभा को भी इसी भोला पंड़ित ने एक पैंतालिस साल के महामूर्ख के पल्ले बाँध दिया था। वह आजीवन अपने मायके का मुँह न देख पायी।

सिर्फ एक भोजपत्र पर पंचाक्षार मंत्र लिखकर देनेवाले ताराबाबा भी इस समाज में है। किसी के गर्भपात के लिए पंचाक्षार मंत्र का प्रयोग करने जैसी मूर्खता करनेवाले जयनाथ जैसे अंधश्रद्धा भी इस समाज में मौजूद है। पढा-लिखा होने के बावजूद भी वह तारा बाबा के पास गौरी के गर्भपात के बारे में पूछने के लिए जाता है। अगर पढे-लिखे लोग इतने अंधश्रद्धा है तो अनपढ़ लोगों का क्या कहना ?

अपनी इस अंधश्रद्धा का अंधविश्वास का फायदा शोषाण हेतु उच्चवर्णीय लोग उठा रहे हैं,इस बात का भी पता इन देहाती लोगों को नहीं चलता। उनके इसी तरह के रवैये के कारण उच्चवर्णीय और अधिक श्रीमंत तथा गरीब और अधिक गरीब बनते जा रहे हैं। सीधी-सादी बात के लिए कर्जा ले लेना और वर्षों उसे चुकाते रहना इसी वजह से इन ग्रामीण लोगों की आर्थिक स्थिति अत्यधिक कमजोर हो गयी है और उन्हें आर्थिक कठिनाईयों का सामना करना पड़ा।

(५) बेगार एवं दास प्रथा --

बेगार प्रथा सामन्ती युग की देन है। इससे तात्पर्य ऐसे शारीरिक श्रम से है जो उच्च वर्गद्वारा निम्नवर्ग के लोगों से लिया जाता है और जिनका मूल्य नहीं दिया जाता।

---

१ नागार्जुन - रतिनाथ की चाची - पृ.६५।

'सामन्ती समाज की यह ऐसी घृणित एवं शोषक प्रवृत्ति थी जिसके अंतर्गत कृषकों एवं मजदूरों से बिना उनके श्रम का मूल्य दिये काम लियाजाता था। छोटी-मोटी धनराशि देकर निर्धन वर्ग को पीढ़ियों तक दासता की श्रृंखला में जकड़ लिया जाता था। वह चाहने पर भी उसे छोड़कर कहीं नहीं जा सकते थे। दासता में जीवन गुजारना ही उनकी नियति थी।' [१]

यह बेगार चमार, शिल्पी आदि से ली जाती थी। मुसलमानी सल्तनत की स्थापना के बाद जब नकद अदायगी का चलन चलने लगा तब से बेगार प्रथा कम होती गयी और वह घरेलू दासता में परिणत हो गयी।

नागार्जुन द्वारा लिखे गये 'रतिनाथ की चाची' उपन्यास में भी इस प्रथा के दर्शन होते हैं। कुल्ली राऊत का रतिनाथ के घर में बेगार के रूप में काम करना यही दर्शाता है। 'कुल्ली राऊत का परदादा ठीठर राऊत था। उसने सात रुपये में अपने को रतिनाथ के परदादा के हाथ बेच दिया था।' [२]

कुल्ली राऊत बचपन से रतिनाथ के घर में काम करता था। चोरी छुपे उसने गायत्री मंत्र और कुछ स्तोत्र सीख लिये थे तो जब यह बात जयनाथ को मालूम हो गयी तो जयनाथ अत्यंत क्रोधित हो गया और उसने राऊत को धमकी दी --

'साले की चमड़ी उधेड़ लूँगा। शूद्र है तो शूद्र की भाँति रहे।' [३]

यहाँतक कि जब अधूरी संध्या करते वक्त राऊत रतिनाथ को टोक देता है तो रतिनाथ सोचता है कि राऊत का कहना गैरवाजिब नहीं है। 'रतिनाथ को कुल्ली राऊत बहुत ही चतुर, बहुत ही व्यावहारिक और बहुत बड़ा ज्ञानी मालूम

---

१ डा. कमल गुप्ता - हिन्दी उपन्यासों में सामन्तवाद - पृ. ४३९।

२ नागार्जुन - रतिनाथ की चाची - पृ. ३१।

३ वही - पृ. ५०।

पड़ा । वह सोचने लगा - अगर यह भी ब्राह्मण के घर में पैदा हुआ होता, तो निश्चय ही इसके बदन पर फटे-पुराने कपड़े न होते । हमारी जूठन खाकर,हमारी पहिरन पहनकर इसके बच्चे पलते हैं । उन्हें कभी स्कूल और पाठशाला जाने का अवसर नहीं मिलता । क्या मर्द,क्या औरत - इन लोगों का जीवन बड़ी जातिवालों की मेहरबानी पर निर्भर है ।"[१]

इस प्रकार नागार्जुन ने बेगार प्रथा और उसके अंतर्गत गरीबों का शोषण किस प्रकार किया जाता है इसका चित्रण किया है । इसी की वजह से वे आर्थिक दृष्टि से किस प्रकार कमजोर दिखाई देते है ,इसका भी चित्रण उन्होंने किया है ।

(६) प्राकृतिक आपत्तियाँ --

भारतीय ग्रामीण समाज आज भी पीछड़ा है । गाँवों में सड़के,नाले ठीक तरह से नहीं बने हैं । चारों ओर गंदगी फैली रहती है । इसी वजह से गाँव बिमारियों के केन्द्र होकर रह गये है । पनघट पर कपडे धोये जाते है, बर्तन माँजे जाते हैं और वहीं पर स्नान भी किया जाता है । इस गंदे पानी से कई तरह की बिमारियाँ फैल जाती है । और वे बिमारियाँ मनुष्य को दीन-हीन बना देती हैं । बिमारियों में दवा-पानी के लिए लोग महाजनों से कर्जा ले लेते है और उसे चुकाने में लग जाते हैं । इन बिमारियों के साथ ही साथ भूकम्प,अकाल,बाढ जैसी प्राकृतिक आपत्तियाँ भी गाँव के लोगों को अधिक सताती है । इन आपत्तियों की वजह से ग्रामीण लोग त्रस्त होते जाते है ।

आलोच्य उपन्यास में नागार्जुन ने ऐसी कई प्राकृतिक आपत्तियों का जिक्र किया है । जैसे -- ' इस साल का सावन शुभंकरपुर के लिए मौत का पैगाम लेकर आया । मलेरिया का ऐसा प्रकोप उस इलाके में इससे पहले शायद ही हुआ हो । लोग पटापट मरे । मवेशी तक न छूट पाये ।"[२]

---

१ नागार्जुन - रतिनाथ की चाची - पृ.५१ ।

२ वही - पृ.१११।

इस बिमारी की वजह से कुछ लोगों ने अपनी जमीन-जायदाद आधे दामों में बेचकर अपना आर्थिक नुकसान करा लिया । कुछ लोग अपना सामान छोड़कर और गाँव छोड़कर भाग खड़े हुए । इस तरह उनका भी आर्थिक नुकसान हुआ ।

'भूकंप जैसी प्राकृतिक आपत्ति जब भी कभी आती है, सभी को विनाश की गर्त में धकेलकर ही चली जाती है । न उस समय कोई किसी की मदद कर सकता है न कोई किसी की मदद पा सकता है । शुभंकरपुर के भूकंप का चित्रण नागार्जुन ने हुबहु किया है । '[१]

जब भी गाँव में बिमारी फैल जाती लोग बहुत कोशिश करते कि उनकी सहायता कोई जल्दी से करें परंतु सरकार की ओर से राहत कार्य तब शुरु होता जब लोगों का काफी आर्थिक नुकसान हो जाता । तो इस राहत कार्य से न लोगों को राहत ही मिलती और न उसका कुछ उपयोग ही होता क्योंकि तब तक काफी लोग मौत के घाट उतर चुके होते । शुभंकरपुर गाँव में जब बिमारी फैल गयी थी - 'ताराचरण ने बड़ी कोशिश की कि जिले और थाने के काँग्रेसी अधिकारियों से इस मामले में कुछ करवाएँ, मगर अभी अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओं की तुलना में नेताओं के लिए इन बातों का क्या महत्व था ? यह वे दिन थे जब कि हिटलर आधा अधिक यूरोप जीत चुका था और गाँधी जी कोई नया कदम उठाना चाहते थे । '[२]

इन प्राकृतिक आपत्तियों के साथ एक बहुत बड़ी मानवनिर्मित समस्या का जिक्र नागार्जुन ने आलोच्य उपन्यास में किया है और वह है युद्ध जिसका आर्थिक प्रभाव देश से लेकर परिवार तक होता रहता है । हिटलर देश-पर-देश काबिज करता जा रहा था और सभी देशों को युद्ध करने पर मजबूर कर रहा था । इसी वजह से सभी चीजों की कीमतें बढती जा रही थीं और देश की अर्थव्यवस्था कमजोर होती जा रही थी । जिस रफ्तार से लड़ाई बढ रही थी उसी रफ्तार से महँगाई भी बढती जा रही थी और गरीब किसान जो पहले से ही किफायत से

---

१ नागार्जुन - रतिनाथ की चाची - पृ.११२ ।

२ तदेव - पृ.११२।

खर्चा कर रहे थे, उन्हें और भी किफायत के साथ जीना पड़ा ।

इस प्रकार नागार्जुन ने आलोच्च्य उपन्यास में आर्थिक समस्या के विविध पहलूओं को उजागर करने का प्रयास किया है । जमींदार एवं महाजनों द्वारा शोषण, निरक्षरता बेकारी, अंधश्रद्धा एवं बेगार प्रथा के कारण आर्थिक विपन्नता से जूझना तथा बीमारी एवं प्राकृतिक विपदाओं के कारण आर्थिक दुर्दशा को और अधिक विफलता के कुहासे में धकेल देना किस प्रकार देहाती जीवन का दुष्टचक्र होता है, यही प्रस्तुत उपन्यास के माध्यम से पाठकों के सामने उपन्यासकार ने रख दिया है ।

निष्कर्ष --

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि नागार्जुन ने बचपन से लेकर जिन आर्थिक समस्याओं को अपने जीवन में देखा, भोगा उनका यथार्थ चित्रण उन्होंने अपने उपन्यास 'रतिनाथ की चाची' में किया है । आर्थिक समस्या के पीछे जो कारण दिखाई देते हैं उनका सफलता के साथ वर्णन नागार्जुन ने किया है । इन समस्याओं के चित्रण के पीछे नागार्जुन का उद्देश्य समाज को इनके प्रति जागृत करना रहा है उसमें वे सफल दिखाई देते है ।

* * * * *